ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBIL04292
RNI REG. NO. UPBIL/2014/66218 PP. NO.- 285-287
ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-15, No.- III, Issues-25, YEAR- July-Sept.-2022

छन्द योजना

डॉ0 कुसुम लता

एसोसिएट प्रोफेसर– संस्कृत विभाग, राजकीय रज़ा स्नातकोत्तर महाविद्यालय, रामपुर (उ0प्र0) भारत

Received-12.09.2022, Revised-17.09.2022, Accepted-23.09.2022 E-mail: aaryvart2013@gmail.com

सारांशः – *काव्य का प्राचीन काल से ही व्यापक में प्रयोग होता आया है। काव्य को जब छन्दों की श्रृंखलाओं में विधिवत् बाँध दिया जाता है तभी उसे कविता की संज्ञा से अभिहित किया जाता है। छन्द विधान वास्तव में कविता की सर्वप्रमुख विशिष्टता है। गद्य को पद्य में परिणित करने वाले साधन का नाम ही छन्द है जिस प्रकार मानव जीवन में चरणों का महत्व है उसी प्रकार पद्यात्मक काव्य में छन्दों का भी महत्व है इसीलिये पद्यकाव्य की रचना चरणों, वर्णों तथा मात्राओं के आकर्षक बन्धन में निबद्ध छन्दोमय श्लोकों द्वारा की जाती है।*

कुंजीभूत शब्द– प्राचीन काल, काव्य, श्रृंखलाओं, कविता, संज्ञा, अभिहित, छन्द विधान, पद्यात्मक काव्य,पद्यकाव्य, वर्णों ।

छन्द शब्द की व्युत्पत्ति एवं अर्थ– छन्द शब्द 'छद्' धातु में 'असुन' प्रत्येक योग से निष्पन्न होता है। यास्क ने 'छन्दांसि छादनात् लिखकर छन्द में छद् धातु को ध्वनित किया है। छद्' धातु का अर्थ होता है– प्रसन्न करना, फुसलाना, आच्छादन करना, बांधना तथा आह्लादित करना इत्यादि। इन्हीं अर्थों के आधार पर छन्द शब्द का अर्थ समान्तया प्रसन्न करने वाली वस्तु, इन्छा आच्छादन, बन्धन आदि से लिया जाता है।

1. छन्द शब्द का वैदिक अर्थ– छन्द शब्द का प्रयोग हमें सर्वप्रथम वैदिक वाङ्मय में उपलब्ध होता है 'छान्दोग्योपनिषद्' में लिखा है कि देवा वै मृत्योर्विम्यतस्त्रयीं विद्यां प्राविशस्ते छंदोभिरच्छादयन्यदोभिरच्छादयस्तच्छंदसां छंदस्त्वम् । अर्थात् मृत्यु से भयभीत हुए देवताओं ने त्रयी विद्या में प्रवेश किया और अपने को छन्दों से [2] आच्छादित कर लिया। अतएव मंत्रों को छन्द भी कहते हैं। आगे चलकर समान्यतया छन्द शब्द वेद के अर्थ में प्रयुक्त होने लगा। आचार्य पाणिनि के बहुला छन्दांसि का स्थान–स्थान पर प्रयोग का [3] उल्लेख किया है। इस प्रयोग में 'छन्दांसि वेदों के लिए प्रयुक्त हुआ है। परवर्ती साहित्य में और भी अनेक स्थलों पर इस शब्द का प्रयोग वेद के ही अर्थ में उपलब्ध होता है।[4] छन्द का अर्थ है 'छन्दयति आह्लादयति इति छन्दः अर्थात पाठ्कों को प्रसन्न करता अथवा आनन्द प्रदान करता है, वह छन्द कहा जाता है। व्याह्रारिक जीवन में यह देखा गया है कि लय एवं ताल के साथ की जाने वाली रचना मानव को ही नहीं मानवेत्तर पशु–पक्षियों को भी मुग्ध करने में समर्थ होती है। इसी कारण ऋषियों ने आत्मविभोर होकर सर्वप्रथम अपने उद्गारों की अभिव्यक्ति छन्दोबद्ध रूप में ही की। यथा–

"अग्निमीले पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विज।
होतारं रत्नधातमम् ।।" [5]

छन्द को वेदाङ्ग में स्थान दिया गया है तथा 'छन्दः पादौतुवेदस्य' के अनुसार उसे वेद का पैर (पाद या चरण) माना गया है। नाट्यशास्त्र' के प्रणेता आचार्य भरतमुनि के मतानुसार सम्पूर्ण वाङ्मय छन्द ही है। फिर काव्य के विषय में तो कहना ही क्या? निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि लौकिक तथा वैदिक कवियों ने छन्दों को अतीव आदर के साथ स्वीकार किया है।

2. छन्दों के भेद– छन्दों के दो प्रमुख भेद पाये जाते हैं– वैदिक और लौकिक। वैदिक छन्दों में अक्षरों (वर्णों) के आधार पर गणना की जाती है और लौकिक छन्द मात्रिक तथा वर्णिक दो प्रकार के माने जाते हैं। मात्रिक छन्द, मात्राओं पर आधारित एवं व्यवस्थित होते हैं और वर्णिक छन्द, वर्णों की समानावृत्ति पर आधृत होते हैं। अर्थात् वार्णिक छन्दों की संख्या पर विचार किया जाता है।

(1) अनुष्टुप लक्षण–

"श्लोक पष्ठ गुरू ज्ञेयं सर्वत्र लघु पञ्चम।
द्विचतुष्पादयोर्ह्यस्य सप्तम दीर्घमन्ययोः ।। "

अर्थात् इसके प्रत्येक पद में 8 अक्षर होते हैं। इसमें षष्ठ अक्षर सदा गुरू होता है और पंचम सदा लघु सप्तम अक्षर द्वितीय और चतुर्थ पद में लघु होता है तथा प्रथम व तृतीय में गुरु शेष अक्षर लघु या गुरू हो सकते हैं।

ईशावास्योपनिषद में अनुष्टुप् छन्द का उदाहरण दृष्टव्य है–

"असूर्या नाम से लोका अन्धेन तमसावृताः ।

तास्ते प्रत्याभिगच्छन्ति ये के चात्महनो जनाः ।। उपर्युक्त मंत्र के चारों चरणों का पांचवां अक्षर लघु, छठा अक्षर गुरू है और द्वितीय व चतुर्थ पद में सांतवा अक्षर लघु है। अतः यहाँ अनुष्टुप छन्द है। अनुष्टुप छन्द को श्लोक नाम से भी अभिहित

अनुरूपी लेखक/संयुक्त लेखक

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-15, No.- III, Issues-25, YEAR- July-Sept.-2022

किया जाता है।

(2) इन्द्रवज्रा– लक्षण– "स्यादिन्द्र वज्रा यदि तौ जगौ गः।"

इन्द्रवज्रा छन्द के प्रत्येक पद में 11 वर्ण होते हैं। इसमें क्रमशः दो तगण, जगण और अन्त में दो गुरू आते हैं। उदाहरणार्थ– श्वेताश्वतरोपनिषद्" का निमम मंत्र दर्शनीय है–

"आरभ्य कर्माणि गुणान्जितानि
भावांश्च सर्वान् विनियोजयेव्यः ।
तेषामभावे कृतकर्म नाशः
कर्म क्षये याति स तत्वतोऽन्यः ।। [7]

यथोपरि उदाहरण में दो तगण, जगण और अन्त में गुरू आने से इन्द्रवज्रा छन्द है। यद्यपि यहां प्रथम पद के अन्त में लघु होना चाहिए था. किन्तु पदान्तस्यौ विक्लयेन" के सिद्धान्तानुसार छन्द में आवश्यकतानुसार पदान्त वर्ण हस्व भी गुरू और गुरू भी हस्व मानने की मान्यता से यहाँ कोई दोष नहीं माना गया है।

(3) उपजाति– लक्षण –

"अनन्तरोदीरितलक्ष्मभाजी,
पादौ यदीयायुपजातयस्ताः ।
इत्थं किलान्यास्वपि मिश्रितासु
स्मरन्ति जातिष्विदमेव नाम ।।" [8]

उपजाति के प्रत्येक पद में 11 वर्ण होते हैं। यह इन्द्रवजा और उपेन्द्रवजा दोनों छन्दों के मिश्रित रूप से बनता है।

उदाहरण–

स वृक्षाकाला कृतिभिः परोऽन्यो
यस्मात् प्रपञ्चः परिवार्तनेयम्।
धर्मावहं पापनुदं भगेशं,
ज्ञात्वात्मस्थममृतं विश्वधान् ।। [9]

यहाँ मंत्र के प्रथम पद में उपेन्द्र वजा और द्वितीय पद में इन्द्रवजा होने से उपजाति छन्द स्पष्ट है।

(4) वंशस्थ–

लक्षण– "जतो तु वंशस्थमुदीरितं जरौ।"

वंशस्थ छन्द के प्रत्येक पद में 12 वर्ण होते हैं। इसमें क्रमशः जगण, तगण, जगण और रगण आते हैं। "श्वेताश्वतरोपनिषद" में वंशस्थ छन्द का उदाहरण दृष्टव्य है–

उदाहरण–

समै शुचौ शंकरावाहिनवालुका – 12 वर्ण
विवर्जिते शब्द जलाश्रयादिभिः ।
मनोनुकूले न तु चक्षुपीडने,
गुहनियताश्रवणे प्रयोजये। [10]

उपर्युक्त मंत्र के प्रत्येक चरण में क्रमशः जगण, तगण, जगण और रगण के योग से 12 वर्ण होने से वंशस्थ छन्द स्पष्टतः परिलक्षित है। यहाँ पर विकल्प के द्वारा एक वर्ण के या हस्व या दीर्घ स्वर परिवर्तन से उपनिषद में कई एक छन्दों की योजना ढूंढी जा सकती हैं जैसा कि उक्त मंत्र के प्रथम पद में स्पष्ट है कि शंकरा के रा' वर्ण में स्वर (मात्रा) के हस्व होने से छन्द पूर्ण हो जाता है।

उपमान– काव्य की अभिव्यक्ति को सुन्दर रूप प्रदान करने और उसे बोधगम्य बनाने हेतु उपमानों का अत्याधिक महत्व होता है। ऋग्वेद काल से लेकर अद्यतन सभी कवि अपनी उक्ति को यथोचित विभिन्न उपमानों से अंलकृत करते आये हैं। संस्कृत साहित्य में कविकुलगुरू शिरोमणि महाकवि कालिदास के उपमान तो प्रख्यात हैं ही, परन्तु उपनिषदकारों को भी उपर्युक्त उपमान रूचिकर रहे हैं। उपनिषद् के ऋषियों को उपमान योजना की सुव्यस्थित परम्परा परवर्ती कवियों को प्राप्त हुई। देखा जाये तो ऋग्वेद और अर्थववेद के उपमान सार्वजनिक जीवन के विभिन्न क्षेत्रों से चुने गये हैं। उसी प्रकार ऋषियों ने भी अपने आध्यात्मिक चिन्तन एवं गहन दर्शन को बोधगम्य व सुन्दर बनाने के लिये उपर्युक्त उपमानों को ग्रहण कर अपनी

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-15, No.- III, Issues-25, YEAR- July-Sept.-2022

रचनायें रच हमें प्रदान की हैं। ये उपमान ऋषियों के दैनिक प्रयोग में आने वाले पदार्थ हैं। यथा–यज्ञ, अग्नि, हवि, चन्द्र, गृह, नक्षत्र इत्यादि भूतल पर प्रवाहमान नदियाँ, पर्वत, पशु–पक्षी, पाश, मुंज, शुरादि इन सबने मिलकर काव्य को सुन्दर रूप प्रदान किया है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. निरुक्तः 7/11.
2. छान्दोग्योपनिषद् 1/4/2.
3. पाणिनी अष्टाध्यायी 7/1/8, 7/1/10.
4. छन्द सामय प्रयोक्ताः– उत्तरामचरितम् प्रणवश्छन्दसायिव– रघुवंश।
5. गायत्री छन्द।
6. छन्दः हीनो न शब्दोडरित, न छन्द शब्दवर्जितम् – नाट्य शास्त्र 7. यथोपरि 3/3.
8. श्वेताश्वतरोपनिषदः 6/4.
9. श्वेताश्वतरोपनिषदः 6/6 2/10 10. यथोपरिः।

*****